यहाँ भगवती-आराधना के मत और श्वेताम्बर-यापनीय मत के पारस्परिक विरोध पर ध्यान दिया जाय। श्वेताम्बर और यापनीय मानते हैं कि बाह्य वस्तुओं का ग्रहण परिग्रह नहीं है, अपितु उनमें मूर्च्छा होना परिग्रह है, किन्तु भगवती-आराधना में बतलाया गया है कि बाह्य वस्तुओं का ग्रहण मूर्च्छोत्पत्ति का हेतु है, अतः वह महापरिग्रह है। परिग्रह की यह परिभाषा यापनीयमत के अत्यन्त विरुद्ध है।

५.५. तीव्र कषाय से ही परिग्रह का ग्रहण

भगवती-आराधना की नीचे दी हुई गाथाओं में कहा गया है कि कषायबहुल (तीव्रकषायपरिणत) जीव ही परिग्रह ग्रहण करता है—

मंदा हुंति कसाया बाहिरसंगविजडस्स सव्वस्स।
गिण्हइ कसायबहुलो चेव हु सव्वंपि गंथकलिं॥ १९०६॥

अनुवाद—"जो बाह्य परिग्रह का त्याग करता है, उसकी कषाय मन्द होती है। तीव्रकषायवाला जीव ही परिग्रहरूप पाप अर्जित करता है।"

अब्भंतरसोधीए गंथे णियमेण बाहिरे चयदि।
अब्भंतरमइलो चेव बाहिरे गेण्हदि हु गंथे॥ १९०९॥

अनुवाद—"अंतरंग में कषाय की मन्दता होने पर नियम से बाह्यपरिग्रह का त्याग होता है। अभ्यन्तर में मलिनता होने पर ही जीव बाह्यपरिग्रह स्वीकार करता है।"

रागो लोभो मोहो सण्णाओ गारवाणि या उदिण्णा।
तो तइया घेत्तुं जे गंथे बुद्धी णरो कुणइ॥ ११११५॥

अनुवाद—"जब राग, लोभ, मोह, संज्ञा और गारव[३७] परिणामों की उत्पत्ति होती है, तब बाह्य परिग्रह को ग्रहण करने का मन होता है, उनके अभाव में नहीं।"

५.६. परिग्रह से रागद्वेष की उदीरणा

परिग्रह रागद्वेष की उदीरणा का कारण है, इसका वर्णन भगवती-आराधनाकार ने इन गाथाओं में किया है—

३७."ममेदं भावो रागः। द्रव्यगतगुणासक्तिर्लोभः। परिग्रहेच्छा मोहः । ममेदं भावः संज्ञा। किञ्चिन्मम भवति शोभनमिति इच्छानुगतं ज्ञानम्। तीव्रोऽभिलाषो यः परिग्रहगतः स गौरवशब्देनोच्यते। एते यदोदिताः परिणामास्तदा ग्रन्थान् बाह्यान् ग्रहीतुं मनः करोति, नान्यथा। तस्माद्यो बाह्यं गृह्णाति परिग्रहं स नियोगतो लोभाद्यशुभपरिणामवानेवेति कर्मणां बन्धको भवति। ततस्त्याज्याः परिग्रहाः।" विजयोदयाटीका / भ.आ./ गा.१११५ / पृ.५७२।

Scanned with OKEN Scanner